भारत में महिलाओं की परिवर्तित सामाजिक अवस्था : एक तुलनात्मक अध्ययन (आदिकाल से स्वतन्त्रता प्राप्ति तक)

डॉ0 दीपशिखा पाण्डेय,
डॉ0 सुशान्त कुमार पाण्डेय,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

सृष्टि के निर्माण में नर एवं नारी के योगदानों की चर्चा हमारे विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों में अनेक रूपों में प्राप्त होती है। विभिन्न प्रकार के कार्यों को सम्पन्न करते हुए नर–नारी सहयोगात्मक रूप में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक व राजनैतिक रूप में सदैव सहयोगी रहे एवं विकसित, सुसभ्य जीवन की ओर अग्रसर हुए। एक साथ चलते हुए पुरूष एवं महिला में न जाने कब पुरूष महिला को अपने पीछे छोड़ता हुआ आगे बढ़ने लगा, साथ ही महिला ने भी स्वयं को नर के साथ चलने के बजाए उसके पीछे चलना स्वीकार कर लिया। यह कोई एक दिन में होने वाला परिवर्तन नहीं बल्कि वर्षों लग गए नारी को पुरूष के पीछे आने में।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से प्राचीन भारत से आधुनिक भारत तक इसकी चर्चा निम्न रूपों में की जा सकती है:

<u>प्रागैतिहासिक काल में महिलाएँ</u>

1. वैदिक काल में महिलाएँ

<u>आद्यऐतिहासिक काल में महिलाएँ</u>

1. सिन्धुघाटी सभ्यता में महिलाएँ

<u>ऐतिहासिक काल में महिलाएँ:</u>

1. महाजनपदकाल में महिलाएँ
2. मौर्यकाल में महिलाएँ
3. शुंग, कुषाण काल में महिलाएँ
4. गुप्त काल में महिलाएँ
5. गुप्तोत्तर काल एवं पूर्व मध्यकाल में महिलाएँ
6. मध्यकाल से स्वतन्त्रता प्राप्ति तक महिलाएँ
   दिल्ली सल्तनत
   मुगल वंश
   स्वतन्त्रता प्राप्ति तक

भारत में प्रथम मानव जिसे रामापिथेकस या शिवापिथेकस के नाम से जानते है। मानव लाखों वर्ष पूर्व से धरती पर अपने अस्तित्व को बनाए हुए योग्यतम की उत्तरजीविता तथा उत्परिवर्तन के सिद्धान्त के अनुसार पशुओं से विकसित होता हुआ नर एवं मादा दोनों रूपों में विकसित होता है।

विश्व का सर्वाधिक प्राचीन मानव आष्ट्रेलोपिथेकस का जीवाश्म अभी तक भारत में प्राप्त नहीं हुआ किन्तु उसके बाद आने वाला नियण्डरर्थल मानव के जीवाश्म तथा उनके द्वारा प्रयोग में लाई गई वस्तुएँ इत्यादि प्राप्त हैं।[1] जिससे प्रागैतिहासिक काल (अर्थात वह काल जिस समय के मानव को लिखने–पढ़ने का ज्ञान नहीं था) के विषय में मानव की गतिविधियों को समझा जा सकता है। प्रागैतिहासिक काल काल में पुरूष और स्त्री दोनों ही जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु शिकार कर भोजन की तलाश में घुमन्तू जीवन जीते हुए गुफा में निवास स्थान बनाकर विचरण करते हुए अपने

कार्य कर रहे थे। जिसके साक्ष्य भीमबेटका (म0प्र0), रायसेन, होशंगाबाद की पहाड़ियों से प्राप्त होते हैं। इस शिकारी जीवन में पुरूष एवं नारी में कोई मतभेद नहीं था। दोनों ही सभी प्रकार के कार्यों को करते थे। गुफाओं से प्राप्त चित्रों से स्पष्ट होता है कि स्त्री की शारीरिक संरचना एवं प्रजनन शक्ति को लेकर नर अवश्य आश्चर्यचकित रहा, तभी उसने उसे दीवारों पर विभिन्न अवस्थाओं में चित्रित किया। वह प्रजनन के पश्चात् उत्पन्न संतान से आकर्षित था। यह शक्ति उसके पास नहीं थी अतः धीरे–धीरे उसने प्रजनन देवी मानकर स्त्रियों की आराधना प्रारम्भ कर दी, तथा उसे अपने साथ रखकर वह स्वयं को सुरक्षित महसूस करता रहा होगा। यही नहीं पुरूष ने स्त्री को देखा कि वह प्रजनन से पूर्व व पश्चात् अपने नित कार्यों उचित प्रकार से नहीं कर पा रही है अतः पुरूषों ने महिलाओं को आराम देने हेतु उनके ऐसे कार्य जिनमें शक्ति की आवश्यकता थी, स्वयं ही करने प्रारम्भ किए, एवं महिलाओं से छोटे, व साधारण कार्य करने को कहे होगें। यही प्रक्रिया समय के साथ निरन्तर चलती रही और धीरे–धीरे संभवतः स्त्री ने स्वयं को बाह्य व शक्ति से सम्बन्धित कार्यों से मुक्त कर लिया एवं घर के अन्दर के कार्यों को अपने हाथों में ले लिया।

यहाँ यह कहना अनुचित नहीं होगा कि स्त्री व्यवस्था कमजोर नहीं थी, दोनों कार्यों का उचित विभाजन कर परस्पर रहने लगे। धीरे–धीरे समय के साथ सामाजिक संरचना का निर्माण होने लगा।

शिकारी एवं आखेट के जीवन से मुक्त होकर कृषि करके, मृद्भाण्ड बनाकर, स्थायी रूप से निवास करने लगे। यहीं से समाज के विभिन्न नियमों का बनना भी प्रारम्भ हुआ होगा। उदाहरणार्थ किसी एक स्त्री को किसी एक पुरूष से जोड़ने हेतु विवाह जैसी संस्था का निर्माण हुआ। किन्तु यह कहा जा सकता है कि स्त्री को विवाह की स्वतन्त्रता रही होगी जैसा कि आज भी कई आदिवासी कबीलों में देखा जा सकता है।

इसी प्रकार समाज की प्रारम्भिक संरचना का निर्माण हुआ। उत्तरोत्तर होती हुई प्रगति ने ग्रामीण संरचना का निर्माण किया और तत्पश्चात् नगरीय संस्कृति में परिवर्तित हो गये।

सिन्धु घाटी की सभ्यता में महिलाएँ

नगरीय संस्कृति अर्थात ईटों के पक्के मकान का निर्माण, औद्योगिक विकास, तकनीकी क्रान्ति, व्यापार वाणिज्य की प्रगति, बड़े नगरों का विकास, विदेशी व्यापार, सुसभ्य समाज जैसी आधारभूत संरचना के निर्माण हेतु जानी जाती हैं। इसी सुसभ्य समाज की सर्वप्रथम झलक हमें सिन्धु घाटी की सभ्यता में प्राप्त होती है। इस सभ्यता को मातृसत्तात्मक व्यवस्था के नाम से जानते है।[2] यह कथन इस बात का प्रमाण है कि माता की शक्ति (स्त्री की स्थिति) पर सम्पूर्ण समाज का आधार।

सिन्धु घाटी सभ्यता के महत्वपूर्ण स्थलों जैसे मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, लोथल, धौलावीरा इत्यादि की नगर संरचना, स्वच्छता, जल निकास प्रणाली समस्त व्यवस्थाएँ उत्तम कोटि की प्राप्त होती है। जैसा कि पूर्व में भी कही देखने को नहीं प्राप्त होता है।

जिस प्रकार एक स्त्री अपने आवास का निर्माण करने में सभी सुविधाओं का ध्यान रखती है, घर के अन्दर प्रत्येक सामान को उसकी जगह पर रखती है, साफ–सफाई, जलनिकासी की पूरी व्यवस्था करती है, उसी प्रकार यह अनुभव किया जा सकता है अवश्य ही इस मातृसत्तात्मक व्यवस्था कहलाने वाली सिन्धु घाटी सभ्यता को भी स्त्रियों ने अपने घर की भॉति साफ –सुथरा, नियोजित, तथा व्यवस्थित रखने का प्रयास किया होगा।

यह सिर्फ एक भ्रान्ति नहीं तथापि सत्य है कि सिन्धु सभ्यता की महिलाएँ आर्थिक (व्यापार, वाणिज्य), राजनैतिक, सामाजिक एवं धार्मिक अधिकारों से परिपूर्ण थी। स्त्रियों की दशा उच्चकोटि की थी।

वैदिक काल में महिलाएँ

वैदिक काल (1500 ई0पू0 से 600ई0पूर्व) को इतिहास के दृष्टिकोण से दो रूपों में विभाजित किया जा सकता हैं, ऋग्वैदिक काल (1500 ई0पू0 से 1000 ई0पूर्व) एवं उत्तर वैदिक काल (1000 ई0पू0 से 600ई0पूर्व)। जिनमें स्त्रियों की स्थिति में अनेक उतार–चढ़ाव आते रहे हैं तथा उनके अधिकारों में भी परिवर्तन आते रहें। ऋग्वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति सुदृढ़ थी उन्हें परिवार तथा समाज में सम्मान प्राप्त था एवं शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। अनेक मंत्रों की रचनाकार स्त्रियों अपाला,घोषा, विश्ववारा, मैत्रयी इत्यादि के नाम मिलते हैं।[3] स्त्रियों को विवाह हेतु वर चयन करने की स्वतन्त्रता प्राप्त थी। स्त्रियों की धार्मिक अनुष्ठानों में उपस्थिति अनिवार्य थी। वे जननी के रूप में पूजक थी, परिवार तथा समाज में सम्मान प्राप्त था एवं सभा व समितियों में भी भाग लेने का अधिकार प्राप्त था, किन्तु ऋग्वैदिक काल में कहीं–कहीं पर कुछ ऐसी उक्तियॉ हैं जिनमें उनका विरोध भी दिखलाई देता है।

उत्तर वैदिक काल तक आते–आते स्त्रियों के सम्मान, कर्म, अधिकार में उत्तरोत्तर अवनति दिखलाई पड़ती है।[4] मैत्रेयी संहिता में स्त्रियों को निम्नकोटि का बताया गया है। उनके लिए निन्दनीय शब्दों का प्रयोग भी होने लगता है। उनकी स्वतन्त्रता पर अनेक प्रतिबन्ध लगाये जाने लगे। ब्राह्माण गन्थों में स्त्रियों पर अंकुश लगाने जैसे नियम देखने को मिले। स्त्रियों से सम्बन्धित अनेक कुप्रथाओं का जन्म होने लगा। विवाह हेतु वर चयन करने की स्वतन्त्रता उनसे छिनते चली गई, इस पर पूर्ण अधिकार पुरूष का होने लगा। विधवा विवाह में रोक लगने लगी। शैक्षिक संस्कारों में भाग लेने पर रोक होने लगी जबकि कुछ उच्च कोटि के लोगों में अभी भी यह अधिकार महिलाओं के पास थे।

समाज में विवाह के आठ प्रकार थे। जिनमें ब्रह्म, दैव, आर्ष एवं गन्धर्व विवाहों में स्त्रियों की स्थिति बलवती हैं किन्तु राक्षस, पैशाच, असुर विवाह यह दर्शाते हैं कि समाज में बलात्कार, अपहरण जैसी घटनाओं ने जन्म ले लिया था। जिसके पश्चात् समाज के शुभचिन्तकों ने कुछ ऐसे नियम बनाए कि जिन स्त्रियों के साथ ऐसा हुआ हो, उन्हें समाज किस प्रकार अपनाए, या उनकी समाज में प्रतिष्ठा बढ़ाने हेतु अनेक प्रकार के विवाह संस्कारों को मान्यता मिल गई, किन्तु नितदिन महिलाओं की स्थिति में गिरावट आती चली गई।[5]

महाभारत, रामायण जैसे पौराणिक ग्रन्थों में स्त्रियों की प्रतिष्ठा पर बल देने का प्रयास किया गया। पौराणिक युग में स्त्री देवी पद से उतरकर सहधार्मिणी के स्थान पर आ गई थी। धार्मिक अनुष्ठानों और याज्ञिक कर्मो में उसकी स्थिति पुरूषों के बराबर थी। कोई भी धार्मिक कार्य बिना पत्नी के नहीं किया जा सकता था।[6]

श्री रामचन्द्र ने अश्वमेघ यज्ञ के समय सीता की हिरण्यमयी प्रतिमा बनाकर यज्ञ किया था। यद्यपि उस समय अरून्धती (महर्षि वशिष्ठ की पत्नी), अनुसूया (अत्रि की पत्नी) आदि स्त्रियों की प्रतिष्ठा देवी रूप में थी, किन्तु यह सभी पुरूषों की सहधर्मिणी ही थी।

स्मृति काल में *'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'* कहकर उसे सम्मानित स्थान प्रदान किया गया। शक्ति स्वरूपा मानने की चेष्टा की गई, माना भी गया, किन्तु यह प्रतिष्ठा निरन्तर गिरती ही चली गई।

ऐतिहासिक काल में महिलाएँ

महाजनपद काल में महिलाओं की स्थिति पूर्वोत्तर से कुछ सुद्रढ़ हुई थी किन्तु यह क्षत्रिय समाज तक ही सीमित रही। अन्य वर्गों में यह स्थिति पूर्व जैसी ही विद्यमान रही तथा स्त्रियों की प्राप्ति हेतु संघर्ष भी किए गये। सामाजिक रूप से अवश्य स्त्रियों को अधिकार मिले थे।

मौर्य काल में स्त्रियों की स्थिति कुछ अच्छी हुई थी। मेगस्थनीज के अनुसार भारत में बहुपत्नी प्रथा प्रचलित थी। पुरूष व स्त्री दोनों को ही पूनर्विवाह का अधिकार प्राप्त था।[7]

कौटिल्य स्वतन्त्र रूप से जीवन बिताने वाली स्त्रियों को 'स्वच्छन्दवासिनी' कहता है। सभंवतः यह समाज धनी स्त्रियों के लिए बेहतर था। कौटिल्य, अर्थशास्त्र में परिव्राजिकाओं (सन्यासिनी) का भी उल्लेख करता है जिन्हें समाज में सम्मान प्राप्त था। स्त्रियॉ प्रायः व्यवसायों के रूप में बुनाई इत्यादि करती थी। अनिष्कासिनी स्त्रियों की सर्वत्र प्रशंसा की गई है साथ ही स्त्रियों को असूर्यपश्या (सूर्य को न देखने वाली) भी कहा गया है। जो यह बताता है कि स्त्री को घर पर रहने के लिए प्रेरित किया गया। सती प्रथा नही थी। सैनिको की स्त्रियों में इस प्रथा का प्रचलन रहा होगा, किन्तु इसकी पुष्टि किसी ग्रन्थ से नहीं होती।

स्वतंत्र रूप से वेश्यावृत्ति करने वाली स्त्री (रूपाजीवा) का उल्लेख है। स्त्रियों की परतन्त्रता इस तथ्य से प्रमाणित होती है कि राज्य गणिकाओं के प्रशिक्षण पर व्यय करता था। यदि कोई स्त्री इससे मुक्त होना चाहती थी तो उसे राज्य द्वारा खर्च की गई राशि का 24 गुना चुकाना पड़ता था। गणिकाओं के ऊपर एक अधिकारी (गणिकाध्यक्ष) की नियुक्ति थी, जो इनकी देखरेख करता था।

मौर्योत्तर काल में भारत में विकेन्द्रीकरण के फलस्वरूप स्थापित एक के बाद एक शुंग वंश, कण्व वंश, सातवाहन वंश, इक्ष्वाकु वंश, चेदि वंश, वाकाटक वंश तथा बाहरी आक्रमण बैक्ट्रियन (हिन्द–यवन), सीथियन (शक), पार्थियन (पह्लव) तथा यू–ची (कुषाण वंश) का आस्तित्व रहा, जिन्होंने अपने–अपने समाज में स्त्रियों की अलग–अलग ढंग से विवेचना की है।

शुंग काल में स्त्रियों के लिए अनेक कठोर नियम बना दिए गए। मनु रचित मनुस्मृति में भी स्त्रियों के लिए निदंनीय वक्तव्य देखने को मिला।

पंतजलि के महाभाष्य में भी स्त्रियों के सम्बन्ध में प्रेरक तथ्य नहीं प्राप्त होते हैं। यहाँ भी स्त्रियों की दशा पूर्वोत्तर जैसी ही रही।

भारत पर होने वाले आक्रमणों ने सामाजिक रूप से स्त्री व्यवस्था पर कुठाराघात किया। बाह्य लोगों के प्रवेश के कारण स्त्रियों को घर से बाहर निकलने पर अंकुश लग गया।[8] कही–न–कही इसी व्यवस्था ने पर्दा प्रथा को जन्म दिया। स्वतंत्र रूप से रहने वाली स्त्रियों की संख्या में कमी हुई। स्त्री अपराधों की संख्या बढ़ी, विवाह के निकृष्ट प्रकारों का भी प्रचलन बढ़ा।

बाल विवाह की प्रथा घर कर गयी, पिता बालिका को बोझ मानकर जल्दी ही उसका विवाह कर देना चाहता था जिससे उसे किसी प्रकार की सामाजिक अवहेलना का सामना न करना पड़े। अतः बाल विवाह की प्रगति हुई, जिसके कारण विधवाओं की संख्या भी समाज में बढ़ी। विधवाओं को अनेक कष्टकारी यातनाएँ दी जाती थी, तथा विधवा विवाह भी अल्प हुए। नारी स्वतन्त्रता में कमी आने से उनके शैक्षिक और आर्थिक अधिकारों में गिरावट आयी।

भारतीय समाज की यह विचित्रता रही कि इन्हीं युगों में जब सामाजिक रूप से स्त्री का पतन दिखलाई पड़ रहा था, वहीं धार्मिक रूप से स्त्री को देवी रूप में पूजा भी जा रहा था। कुषाण वंश के प्राप्त सिक्कों पर देवियों की आकृति एवं

कुषाण युग की मूर्तिकला में नारी की प्रतिष्ठा देखने को मिलती हैं।

सातवाहन काल से प्राप्त प्रथम सीसे के सिक्कें पर राजा रानी को एक साथ सिंहासनारूढ़ दिखाना, यह प्रतीक है कि स्त्रियों के राजनैतिक अधिकारों में प्रगति हुई। नागनिका का पूना ताम्रपत्र अभिलेख, माता बलश्री का नासिक अभिलेख यह प्रकट करता है कि अभिलेख लिखवाने का कार्य स्त्रियॉ भी कर रही थी। यदि यह अभिलेख नहीं मिलते तो सातवाहन शासकों के इतिहास के विषय में भारत में अंधकार ही रहता, जो कि इसकी महत्ता को दर्शाता है।

सातवाहन शासकों का अपने नाम के आगे स्त्रियोचित शब्दों का प्रयोग (सभवतः अपनी माता का नाम पहले लाना) जैसे गौतमी पुत्र सातकर्णी, वशिष्ठ पुत्र पुलुमावी एवं सातकर्णी की विभिन्न मुद्राऐं यह प्रकट करती हैं कि स्त्रियों की स्थिति पहले से अच्छी हो गयी थी, एवं उन्हें उनके राजनैतिक, धार्मिक अधिकार के साथ सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हुए थे।[9]

गुप्तकाल के समाज पर कुषाण वंश व सातवाहन वंश की छाया रही जो कि अनेक स्थानों पर दृष्टिगोचर होती हैं। स्त्रियों की बढ़ती हुई सामाजिक प्रतिष्ठा गुप्तयुग में भी देखने को मिलती है।

गुप्तकाल तक आते–आते महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ, उन्हें सम्मान के साथ पूजनीय माना जाने लगा, किन्तु यहाँ भी उन्हें पुरूष के साथ ही देखा गया। महिलाओं पर पुरूषों का वर्चस्व बना रहा। विवाह के पूर्व पिता, भाई, विवाह के पश्चात् पति, पुत्र इत्यादि पर उसकी निर्भरता रहती थी। क्षत्रिय स्त्रियों को तो राजकीय सम्बन्धों की प्रगाढ़ता की कुंजी माना गया, जिससे मित्रता करनी है, अपनी बहन या पुत्री को उसके घर विवाह कर देना, जिससे शत्रुता हो गई उसकी स्त्री का अपमान करना यह भी निरन्तर चलता रहा। जो कि निन्दनीय है।

राजनैतिक व सामाजिक दोनों ही रूपों में गिरती महिलाओं की दशा के पश्चात् भी धार्मिक अनुष्ठानों में स्त्री का सहयोग प्राप्त करना आवश्यक था। गुप्त कालीन सिक्कों एवं मूर्तियों पर स्त्रियों को अनेक क्रियाओं में दर्शाया गया।

गुप्तकाल में जातियों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई। जातियों की संख्या में वृद्धि के महत्वपूर्ण कारणों में से अनुलोम, प्रतिलोम विवाहों की संख्या बढ़ना, अर्थात अपने कुल में विवाह न करके दूसरे कुल की कन्या से विवाह करना था।

अनुलोम (जिसमें पुरूष उच्चकुल व पत्नी निम्नकुल) विवाह तो कही स्वीकार्य भी था, किन्तु प्रतिलोम विवाह (उच्च कुल की स्त्री, पुरूष निम्न कुल) निन्दनीय तथा अपराध की श्रेणी में था। इन विवाहोपरांत संतान को समाज में सम्मान न प्राप्त होने से यह अपनी नई जाति का निर्माण करने लगे।

प्रतिलोम विवाह से उत्पन्न संतान को नगर के बाहर ही रहने को विवश किया गया जिनमें चांडाल, आयोगव, पुलकस, सूत पुत्र इत्यादि जातियॉ थी। अतः स्पष्ट है कि इन सामाजिक संरचनाओं में महिलाओं को अनेक प्रकार के कष्टों से गुजरना पड़ा होगा, जो कि सुसभ्य समाज का आधार नहीं हो सकता है।

वेश्याओं में एक वर्ग दासियों का हो गया था।[10] देवदासियों (मंदिर में पूजा इत्यादि कार्यों हेतु रखी जाने वाली अविवाहित स्त्रियॉ) की प्रथा गुप्त समाज पर एक कलंक है। जहॉ मंदिरों में इन्हें उपभोग की वस्तु समझा जाता था। एक बार देवदासी हो जाने पर उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा समाप्त हो जाती थी। यही से स्त्री को उपभोग की वस्तु के रूप में भी देखे जाने के संकेत मिलने लगते हैं, जो गुप्त युग की अनेक प्रकार की सफलताओं पर कुठाराघात है। वह समाज प्रगतिवान, स्वर्णयुग की श्रेणी में कैसे आ सकता है जहॉ कि स्त्रियों को यथोचित सम्मान न प्राप्त हो।

गुप्तोत्तर अथवा पूर्व मध्यकाल में महिलाएँ

गुप्तों के पश्चात् सर्वप्रथम हर्ष के शासनकाल में भानुगुप्त के एरण अभिलेख में सती प्रथा पर स्पष्ट लेख मिलना यह निश्चित कर देता है कि इस प्रथा की वीभत्सता अधिक बढ़ चुकी थी। क्षत्रियों की स्त्रियॉ सुरक्षित नहीं रहीं, उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही पुरूष की अधीनता में समाप्त हो चुका था। यदि क्षत्रिय पुरूष की मृत्यु हो जाए तो उसकी स्त्री को जबरन सती होने के लिए बाध्य होना पड़ा, और इस कुप्रथा को स्त्रियों ने अपने जीवन का अंग मान लिया। शासक हर्षवर्धन की बहन राज्यश्री की घटना सर्वविदित है कि जब उसके पति ग्रहवर्मा की हत्या कर दी गई तो वह स्वयं कारागार से मुक्त होकर सती होने के लिए वन के लिए प्रस्थान करती है,[11] यह इस व्यवस्था का उत्तम उदाहरण है। यही स्थिति और बढ़ती चली गई जो अपना भयंकर रूप हमें राजपूत काल में दिखाती है, जब स्त्रियॉ अपने व्यक्तित्व को भूलकर स्वयं को इस प्रकार पुरूष की परतन्त्रता स्वीकार कर आत्मदाह को अपना सम्मान समझ बैठती है।

उपभोग की वस्तु के रूप में प्रयोग होते हुए निरन्तर नारियों के सम्मान में कमी आती रही। समाज में सामान्य परिवारों में भी यही स्थिति थी।

जब 712 ई0 में मु0बिन कासिम तत्पश्चात् मुहम्मद गोरी का आक्रमण भारत पर हुआ उस समाज में स्त्री मात्र उपभोग की वस्तु के रूप में उपयोग की जा रही थी। जबकि कुछ एक स्त्रियों की वीरता के विषय में भी ज्ञात होता है किन्तु वह अत्यन्त अल्प है। वीरांगनाओं के युद्धों में भाग लेने के उदाहरण प्राप्त होते हैं। जैसे रावर का युद्ध में मुहम्मद बिन कासिम से किसी शासिका (संभवतः दाहिर की पत्नी रानीबाई)[12] ने लड़ा था हालॉकि इसके स्पष्ट प्रमाणों का अभाव है। इससे यह स्पष्ट है कि स्त्री के पास राजनैतिक शक्तियॉ अवश्य रही होगी, किन्तु पुरूष की अधीनता के अन्तर्गत।

मध्यकाल से स्वतन्त्रता प्राप्ति तक महिलाएँ

मध्यकाल में जब दिल्ली सल्तनत की नींव पड़ी तब इस्लाम का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से भारत की महिलाओं पर पड़ा। इस्लाम धर्म के अन्तर्गत स्त्री की स्वच्छन्दता, कुछ नियमों में बाँधकर समाज में नये रूप में सामने आयी, फलस्वरूप पर्दाप्रथा घर कर गयी। दिल्ली सल्तनत के अन्तर्गत शासन की नीतियों में महिलाओं का स्थान वस्तु मात्र था, उन्हें बाहर निकलने पर प्रतिबन्ध, पर्दा करना, गुलाम बनाकर रखना, ये सब देखने को मिला।

किन्तु इसी व्यवस्था के अन्तर्गत एक महिला रजिया सुल्ताना (योग्य पिता की योग्य पुत्री)[13] अपनी योग्यता के दम पर, प्रजा के सहयोग से दिल्ली के सिहांसन पर विराजमान होती है। एक महिला का सिंहासन पर बैठना किसी को पसन्द नहीं आया, उसके पिता के गुलाम एवं उनके करीबी लोग ही उसके शत्रु बन बैठे थे। इसी कारण उस योग्य महिला को मात्र 3 वर्ष 6 माह 6 दिन की सत्ता की प्राप्त हुई, और छल से उसकी हत्या करवा दी गयी, इससे यह स्पष्ट अवश्य हुआ कि महिलाएँ योग्य थी किन्तु उनके पास अवसर नही थे।

1526 ई0 में बाबर के आक्रमण के समय भारत की स्थिति राजनैतिक, सामाजिक रूप से कमजोर थी, किन्तु धार्मिक एवं आर्थिक रूप से इसकी सुद्रढ़ता ही विदेशियों के आकर्षण का कारण रहा। दिल्ली सल्तनत के शासक आपसी संघर्ष में व्यस्त थे अन्ततः पानीपत के युद्ध में बाबर की विजय से भारत में मुगल साम्राज्य की नींव पड़ी। बाबर से औरंगजेब तक मध्यकाल की महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन आए। ऐसी कई महत्वपूर्ण महिलाओं के नाम व काम देखने को मिलते हैं जिन्होंने अपनी योग्यता से इतिहास में स्थान पाया। इस्लाम की व्यवस्था में एक पुरूष

की कई सारी पत्नियॉ होती थी। चाहे वह बादशाह हो या सामान्य नागरिक हो। हुमॉयु की बेगम माहमसुल्ताना, गुलरूख बेगम, दिलदार बेगम थी, जिनके पुत्रों ने शासन में भागीदारी की, इन बेगमों ने यह नियति स्वीकार कर ली थी कि उन्हें अन्य पत्नियों के साथ मिलजुल कर रहना हैं।

बादशाह अकबर के समय में धायमाँ, माहम अनगा, जीजी अनगा जैसी स्त्रियों की राजनैतिक भागीदारी तथा विद्रोह इत्यादि क्रियाओं को करना उनकी प्रतिभा को दर्शाता है कि पर्दे में रहकर भी वे अपनी योग्यता से सबको प्रभावित करती है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि पुरूष की अधीनता अभी भी है किन्तु महिलाएॅ अपने व्यक्तित्व व प्रतिभा को निखार रही थी। यह कहा जा सकता है कि उनकी प्रतिभा इतनी अधिक है कि उसे दबाकर नहीं रखा जा सकता था।

अकबर चौरागढ़ के युद्ध में महोबा की चन्देल राजकुमारी दुर्गावती की वीरता से अकबर अत्यन्त प्रभावित हुआ था।[14] यह प्रकट करता है कि साहस, कूटनीति, प्रतिभा में इस युग की महिलाएॅ कमतर नहीं थी, किन्तु अकबर की राजपूत नीति के अन्तर्गत महिलाएॅ बिना अपनी इच्छा के किसी पुरूष से विवाह करने को बाध्य थी, जैसा कि विदित है कि जोधाबाई स्वयं प्रारम्भ में अकबर से विवाह नहीं करना चाहती थी किन्तु नीति के फलस्वरूप उन्हें ऐसा करने को मजबूर होना पड़ा। इस समय विवाह की आयु भी 14 वर्ष ही थी जिस समय स्त्री अभी अल्पविकसित होती थी।

जहाँगीर के समय नूरजहाँ की शक्ति बहुत अधिक बढ़ चुकी थी। जहाँगीर की दुर्बलता तो इसका कारण अवश्य था, किन्तु नूरजहाँ की प्रशंसा भी करनी होगी, कि उसकी राजनैतिक महत्वाकांक्षा ही थी कि वह इस जगह तक पहुँची जहाँ वह स्वतन्त्र शासिका तो नहीं बन सकी किन्तु राजाज्ञाओं पर उसके हस्ताक्षर होने लगे। झरोखा दर्शन में एवं तुलादान में उसकी महत्वपूर्ण भूमिका होने लगी, और बाद में षड़यन्त्रों द्वारा उसने गद्दी के लिए विद्रोह भी किया।

शाहजहाँ का विवाह अर्जुमन्दबानों बेगम उर्फ मुमताजमहल से हुआ था, जिसका प्रभाव पूरे जीवन उसके व्यक्तित्व पर पड़ा। मुमताज महल के चार पुत्र एवं तीन पुत्रियॉ थी, जहाँआरा, रोशनआरा, गौहनआरा तीनों पुत्रियों ने अपने भाइयों के उत्तराधिकार के युद्धों में बराबर सहयोग दिया। जो उनकी महत्वपूर्ण उपस्थिति को प्रकट करता हैं। अतः अत्यन्त दबाव, पर्दे, इत्यादि को सहन करते हुए भी महिलाओं की स्थिति मजबूत बनी रही, जो उनकी आन्तरिक मजबूती एवं दृढ़ता को दर्शाता है।

भारत में आने वाले बाह्य व्यापारियों पुर्तगाली, डच, इग्लैड व फ्रांसिसी इत्यादि की बढ़ती शक्ति से एक बार फिर भारत में नये धर्म, नये लोगों की संस्कृति ने भारत को प्रभावित किया। उन्होंने इस देश को मात्र उपनिवेश और उनके इसी विचार के कारण ही हम उन्हें व वे हमें अपना न सके। इस समय समाज में व्याप्त कुप्रथाओं ने सामाजिक संरचना को कमजोर बना दिया था। सामान्य महिलाओं का शोषण अनेक प्रकारों से हो रहा था। अशिक्षा, बाल विवाह, सती प्रथा, पर्दा प्रथा, दहेज प्रथा, वेश्यावृति, दास–दासियों का वर्ग जैसी अनेक कुप्रथाएं महिलाओं की उन्नति में बाधक थी।

भारत में यूरोपियों के आगमन के पश्चात् महिलाओं की स्थिति में तत्कालिक कोई परिवर्तन नहीं दिखाई देता है, तथापि विचारों में शनैः शनैः बदलाव होने प्रारम्भ हो गये थे। यह सत्य है कि वैचारिक परिवर्तन ही मूलतः सामाजिक परिवर्तन है और कोई भी सामाजिक परिवर्तन अचानक नहीं होता, वरन् समय की गति के समान धीरे–धीरे निरन्तर चलता रहता है। यह परिवर्तन उस समय परिलक्षित होता है जब उसके मूल में बदलाव आने आरम्भ हो जाते हैं। यह तथ्य सर्वमान्य है

कि कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था वाले समाज की अपेक्षा उद्योग प्रधान समाज में महिलाओं की स्थिति अच्छी होती है, और यह समय इसी व्यवस्था का था।

समाज में बढ़ते हुए राजनैतिक पतन, ब्राह्य व्यापारी लोगों के अधिपत्य एवं ईसाई धर्म के प्रचार के विरोध में सम्पूर्ण भारत में विरोध के स्वर उठ रहे थे। इन्हीं विरोधी स्वरों में कुछ स्त्रियों के नाम ऐसे भी थे, जिन्होंने इतिहास को स्वयं के बारे में लिखने के लिए विवश कर दिया। डलहौजी की हड़पनीति के खिलाफ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, कर्नाटक की रानी कित्तूर चेन्नमा, कर्नाटक की रानी अबक्का, बेगम हजरत महल इत्यादि ने अंग्रेजों से सीधे युद्ध किया व वीरगति को प्राप्त हुई। जो प्रकट करता है कि उनकी शारीरिक क्षमता, नेतृत्व क्षमता कही भी पुरूष से कम नही थी। उनके मनोबल के आगे शत्रु नतमस्तक हो गया था।

1857 ई0 की क्रान्ति के समय से ही भारत भूमि पर हो रहे परिवर्तनों ने जहाँ एक ओर नवजागरण की जमीन तैयार की, वहीं विभिन्न सुधार आन्दोलनों और आधुनिक मूल्यों की रोशनी में, हिन्दू समाज के रूढ़िवादी मूल्य टूट रहे थे, एवं स्त्रियों के बंधन ढीले पड़ रहे थे। स्त्रियों की दुनिया चूल्हे–चौके से बाहर नए आकाश में विस्तार पा रही थी।[15]

इतिहास साक्षी है कि इतने बड़े पैमाने पर कट्टर रूढ़िवादी हिन्दू समाज में महिलाएँ सड़क पर नही उतरी थी, जितनी कि स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय। गाँधी ने कहा था कि बिना माँ, बहनों के सहयोग के यह संघर्ष अधूरा है। अनेक महिलाओं ने आजादी की लड़ाई में अपने साहस का परिचय दिया। जिनमें प्रमुख थीः

ऊषामेहता सावित्रीबाई फूले (सीक्रेट कांग्रेस रेडियो, गॉधीवादी), दुर्गा बाई देशमुख (वकील, सामाजिक कार्यकर्ता, गांधीवादी), अरूणा आसिफ अली (1998 में भारतरत्न, गांधी के साथ आन्दोलनरत), सुचेता कृपलानी (उ0प्र0 की पहली मुख्यमंत्री, स्वतन्त्रता सेनानी), विजयलक्ष्मी पंडित (संयुक्त राष्ट्र की प्रथम भारतीय अध्यक्ष), कमला नेहरू (स्वतंत्रता आन्दोलन), सरोजनी नायडु (स्वतंत्रता सग्राम सेनानी, कवियित्री), कस्तुरबा गाँधी (गांधी की पत्नी, आन्दोलन में भाग), मैडम भीकाजी कामा (भारत का प्रथम झंडा फहराने का कार्य, सामाजिक कार्यकर्ता), डॉ0 लक्ष्मी सहगल (स्वतंत्रता संग्राम सेनानी)।

विशिष्ट घरों में रहने वाली या सामान्य महिलाएँ सभी ने विदेशियों के अधिकार से भारत को आजादी दिलाने में सहयोग दिया। कुछ स्त्रियों ने अंग्रेजों के सामने आकर कुछ ने आन्तरिक रूप से क्रांतिकारियों व अंहिसावादियों का साथ दिया जिससे यह जागरूकता पूरे भारत में फैली कि हमें विदेशियों की अधीनता में नहीं रहना है। अन्ततः समस्त प्रयासों के फलस्वरूप 1947 ई में हमें आजादी प्राप्त हुई। यह आजादी सिर्फ अंग्रेजों से ही नही थी। समाज में फैली कुप्रथाओं सती प्रथा, बाल विवाह सभी पर लोग जागरूक हुए।

अतः यह तुलनात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि स्त्रियॉ प्रत्येक समय में अनेक संकटों से जूझते हुए भी अपने अस्तित्व को बचा कर रखती रही। वह सिर्फ पुरूष की सहधर्मिणी ही नहीं बल्कि स्वतंत्र आस्तित्व रखने वाली समाज को आगे बढ़ाने वाली, शक्ति स्वरूपा थी एवं सदैव रहेंगी, मार्ग में आने वाली बाधाएँ भी उन्हें रोक नहीं सकती है।

सन्दर्भ

1. पाण्डेय, जयनारायण, पुरातत्व विमर्श, प्राच्य विद्या संस्थान, इलाहाबाद, 1983

2. थपल्याल के0के0, एवं, संकटा प्रसाद जत6शुक्ल, सिन्धु सभ्यता, उ0प्र0हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1976
3. श्रीवास्तव कृष्ण चन्द्र, प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2004
4. झा द्विजेन्द्रनारायण एवं श्री माली, प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1981
5. पाण्डे एस0के0, प्राचीन भारत, प्रयाग एकेडमी, इलाहाबाद, 2005
6. गुप्ता कमलेश कुमार, महिला सशक्तीकरण, बुक एनक्लेव, जयपुर
7. मिश्रा, जयशंकर, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना 2006
8. नागेन्द्र, शैलजा, वोमेन्स राइट्स, ए0डी0वी0 पब्लिशर्स, जयपुर 2006
9. लूणिया, बी0एन0, प्राचीन भारतीय संस्कृति, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 1966
10. जायसवाल, एस0के0, प्राचीन भारत का सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक जीवन, न्यू रायल बुक कम्पनी, लखनऊ, 2013
11. श्रीवास्तव कृष्ण चन्द्र, प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2004-05
12. शर्मा, एल0पी0, भारत का इतिहास, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 1975
13. शर्मा, एल0पी0, भारत का इतिहास, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 1975
14. शर्मा, एल0पी0, भारत का इतिहास, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 1975
15. पाण्डे, एस0के0, आधुनिक भारत, प्रयाग एकेडमी, इलाहाबाद, 2006
16. अल्तेकर, ए0एस0, द पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, मोती लाल बनारसीलाल, वाराणसी 1956
17. Pruthi, Raj Kumar; Rameshwari Devi and Romila Pruthi, *Status and Position of Women: In Ancient, Medieval and Modern India*. Vedam books. 2001

Copyright © 2014. Dr. Deepshikha Pandey and Dr. Sushant Kumar Pandey. This is an open access refereed article distributed under the Creative Common Attribution License which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.